मौलिक तकनीकी लेखन और अनुवाद

डॉ. श्रीनारायण सिंह
निदेशक, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो

टेक्नोलॉजी के रथ पर सवार भूमंडलीकरण का यह दौर सूचना विस्फोट और बाजार का है। तकनीक के क्षेत्र में आए दिन जो आविष्कार हो रहे हैं, उससे मनुष्य की क्षमता के आगे बहुत बड़ी चुनौती खड़ी हो गई है। आज के दौर में टेक्नोलॉजी एक तरह से दोधारी तलवार बन गई है। वह हमारे लिए विकास की राह पर तेजी से आगे बढ़ने के नए-नए दरवाजे खोल रही है, तो अपने विराट प्रभाव से हमें हमारी औकात बताकर हतप्रभ भी कर रही है। मतलब साफ है कि जो टेक्नोलॉजी मनुष्य की बुद्धि और प्रतिभा से उत्पन्न होकर आज इतनी विपुल और विराट हो गई है, वहीं मनुष्य की क्षमता के आगे चुनौती भी खड़ी कर रही है। टेक्नोलॉजी के इस विपुल-विराट रूप और व्यापक चुनौती का सामना करने के लिए मनुष्य को निरंतर नए-नए रास्ते तलाशने पड़ रहे हैं। भूमंडलीकरण से पैदा हुई नई बाजार व्यवस्था में चकमक विज्ञापनों की चकाचौंध आदमी को उसके घर में घुसकर दयनीय बना रही है। व्यापारिक प्रतिस्पर्धा और कॉरपोरेट पूंजी कमजोर और पिछड़े समाज को और कमजोर करती जा रही है। उपभोक्तावादी लहर में मुनाफे की भूख जिस तरह से बढ़ती जा रही है, यदि इसे रोका नहीं गया तो अकूत क्षमता और अपार संभावनाओं वाला हमारा समाज “मैनपॉवर” और “कंज्यूमर” मात्र बनकर रह जाएगा।

ज़ाहिर है कि आज के प्रतिस्पर्धी जमाने में प्रगति और विकास के लिए दुनिया के देशों में जो होड़ मची है, उसमें टेक्नोलॉजी के साथ-साथ भाषा की भी बड़ी भूमिका है। संपन्न देश अनुसंधान और विकास के काम में अरबों रुपए खर्च कर जो मशीन और माल तैयार कर रहे हैं, उसका प्रविधि-साहित्य और सूत्र उन्हीं संपन्न देशों की भाषा में रचा जाता है। भारत जैसे विकासशील देश अपवादों को छोड़ दें तो अनुकरण ही कर रहे हैं। स्वाभाविक है कि हमारे अनुकरण की भाषा भी उधार की भाषा बन रही है। इससे हमारा मौलिक चिंतन, उद्भावना और नवाचार बेहिसाब रूप से बाधित हो रहे हैं। यह प्रवृत्ति भारत जैसे विकासशील देश एवं समाज के लिए बड़ी घातक है।

आज के जमाने में प्रगति और विकास की कुंजी आविष्कार और नवाचार हैं। किंतु भारत में आविष्कार और नवाचार की भाषा हमारी अपनी भाषा नहीं है, अंग्रेजी है। हमारे प्रगति और विकास को पहला आघात यही झेलना पड़ता है। पराई भाषा के चलते हमारी उद्‌भावना और नवाचार परिणाम में नहीं ढल पाते। उद्‌भावना और नवाचार हमेशा अपनी भाषा में अंकुरित होते हैं। पराई भाषा तो आदमी को कुंठित और पिछलग्गू बनाती है।

ऐसे में सवाल है कि भारत में विज्ञान और तकनीक की भाषा क्या हो ? अब तक हमारा वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुसंधान और विकास जिस अंग्रेजी भाषा के माध्यम से चलता चला आ रहा है, उसे ही कायम रखा जाए अथवा उसे अपनी भाषा में लिखने-पढ़ने और सोचने का सिलसिला शुरू किया जाए । परंपरा को बनाए रखना हमें यथास्थितिवादी बनाएगा । कहा जा सकता है कि भारत की अर्थव्यवस्था और विज्ञान तथा तकनीक के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास तो हो ही रहे हैं । अंग्रेजी जैसी समर्थ भाषा को रखने में क्या हर्ज है ? यदि यह यथास्थितिवाद है तो इस यथास्थितिवाद से हमारी माली हालत धीरे-धीरे ही सही, सुधर तो रही ही है । सुधार का यह सिलसिला कायम रहा तो एक दिन हम उन्नत बन जाएंगे ।

परंतु इस यथास्थितिवाद का जो दूसरा पहलू है, वह बड़ा भयानक और खतरनाक है । इस रास्ते भारत में अमीरी और गरीबी की खाई दिन पर दिन गहरी होती जा रही है। अमीर और अमीर बनते जा रहे हैं तो गरीब और गरीब । इस यथास्थितिवाद ने हमारे समाज में भ्रष्टाचार को एक स्वीकृत मूल्य बना दिया है । असमानता से पैदा हो रही स्थिति भारतीय समाज को गृहयुद्‌ध की ओर ले जा सकती है। इसलिए यह यथास्थितिवाद भयानक और खतरनाक है ।

दूसरा रास्ता विज्ञान और तकनीक को अपनी भाषा में साध कर अपने नवाचारी अवदान से प्रगति और विकास की गति को तेज करने का है । इसमें हमारी प्रतिभा का शत-प्रतिशत उपयोग सुनिश्चित है। इस रास्ते हम अपने संसाधनों और क्षमता का समुचित उपयोग कर समृद्‌धि ला सकते हैं । हम अपनी

सामाजिक खाइयों को पाटते हुए तेजी से विकसित समाज बनकर दुनिया के विकसित देशों की जमात में शामिल हो सकते हैं ।

जिस औद्योगिक क्रांति ने 17वीं शताब्दी के बाद के भारत को पिछड़ा और पिछलग्गू बना दिया और यूरोप तथा अमेरिका को विकसित, उसी औद्योगिक संसाधनों के समुचित और नवाचारी उपयोग से हम अपने समाज को स्वस्थ और विकसित बना सकते हैं। इसके लिए विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में हमें अपनी प्रचुर मानव-शक्ति तथा अदम्य कौशल का उपयोग सुनिश्चित करना होगा। इस उपयोग का तरकीब हमारा अपना होगा, उधार का लिया हुआ हर्गिज़ नहीं। अपना रास्ता अपनी भाषा में विज्ञान और तकनीक में पारंगत होने, कौशल अर्जित करने और उसके हरफनमौला खिलाड़ी होने के जरिए प्रशस्त होगा। इन सबके लिए जरूरी है कि हमारी विज्ञान की पढ़ाई, हमारी प्रौद्योगिकी का साहित्य, हमारी संकल्पना तथा अनुसंधान के पारिभाषिक शब्द आदि हमारी अपनी भाषा में हों। कम-से-कम देश की संपर्क भाषा हिंदी में तो निश्चित रूप से हों।

भारत का संविधान अलग-अलग संदर्भों में शिक्षा, शासन और प्रबंधन आदि में भारतीय भाषा और हिंदी भाषा को अपनाने की बात कहता है। परंतु आजादी के 70 वर्षों बाद भी हम यथास्थितिवाद की मानसिकता से उबर नहीं पाए हैं। हम एक साथ 104 उपग्रहों को अंतरिक्ष की कक्षाओं में सफलतापूर्वक प्रक्षेपित और स्थापित करने वाले क्षमतावान समाज हैं। हम मंगल पर सस्ते में अपना उपग्रह भेजने की योग्यता रखते हैं। हम जटिल-से-जटिल रोगों का विश्व मानक के अनुरूप सस्ते में उपचार करने का कौशल और ज्ञान रखते हैं। हम अपने कौशल और तरकीब से दुर्गम और कठिन परिस्थितियों को भी अनुकूल बनाने की हिम्मत और हूनर रखने वाले समाज हैं। और इसका लोहा पूरी दुनिया मानती है।

परंतु उच्चतर अध्ययन और अनुसंधान में हम पराई भाषा को अपनाने वाले फिसड्डी समाज भी हैं। हम अन्य मामलों में तो दुनिया के विकसित देशों और समाजों से अपने को जरा भी कमतर नहीं मानते हैं, परंतु पता नहीं क्यों भाषा का सवाल आते ही हम हथियार डाल देते हैं। पता नहीं क्यों औपनिवेशिक मानसिकता हमारा पीछा नहीं छोड़ती ? पता नहीं क्यों अंग्रेज और अंग्रेजी की श्रेष्ठता का

बोध हमारे दिलोदिमाग पर अभी भी हावी है ? हमारे चरित्र का यह दोहरापन हमारी सबसे बड़ी समस्या है।

वैसे भाषा के मामले में संवैधानिक प्रावधान को पूरा करने के लिए शासन-प्रशासन में अनुवाद के सहारे हिंदी में काम हो रहे हैं। वैज्ञानिक पुस्तकों के अनुवाद भी अब कई संस्थानों द्वारा कराए जाने लगे हैं। 'राष्ट्रीय अनुवाद मिशन' और 'अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय', भोपाल द्वारा इस दिशा में अच्छे प्रयास किए जा रहे हैं। हिंदी विश्वविद्यालय में अगले सत्र से इंजीनियरिंग और चिकित्सा की पढ़ाई हिंदी माध्यम से शुरू करने की तैयारी है। कुछ प्रदेशों के प्रौद्योगिकी संस्थानों में भी कभी-कभार एकाध कक्षाएं हिंदी माध्यम से पढ़ा दी जाती हैं। किंतु इस दिशा में जो सबसे बड़ी मुश्किल है, वह है हिंदी में मौलिक तकनीकी लेखन का अभाव। हिंदी में अनुसंधान की संकल्पना और प्रयोग-प्रविधि के लेखन की कमी। हिंदी में मौलिक रूप से लिखे गए विज्ञान और तकनीक के ढेर सारे स्तरीय ग्रंथ देश को चाहिए। नवाचारी और आत्मनिर्भर विकसित समाज बनने के लिए हमें अपनी संकल्पनाएं तथा अपना खोजी सूत्र और पारिभाषिक शब्द अपनी भाषा में चाहिए। इसके साथ-साथ हमारे शिक्षण संस्थानों और प्रशिक्षण केंद्रों में भी हमारे कौशल विकास की बातें हमारी भाषा में बताई जानी चाहिए।

परंतु जमीनी सच्चाई दूसरी है। इसका दुष्परिणाम है कि जो वैज्ञानिक, इंजीनियर, डॉक्टर, शासक एवं प्रशासक हिंदी के अच्छे जानकार होते हैं, वे भी अंग्रेजीमय वातावरण में औपनिवेशिक मानसिकता के शिकार होकर 'रटंत तोता' बन जाते हैं। फलस्वरूप विकास एवं बदलाव की बातें और हमारे सपने जस-के-तस, धरे-के-धरे रह जाते हैं।

आधुनिक भारत में अनुवाद आजादी से जुड़ा आत्मनिर्भर विकास की जरूरत रही है। आजादी के तत्काल बाद जब चहुमुँखी विकास की योजनाएं बनने लगीं तो प्रशासन, शिक्षा, विधि, वाणिज्य, भारी उद्योग आदि विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय भाषाओं, विशेषकर हिंदी भाषा के प्रचलन की जरूरत महसूस हुई। तब पूरा प्रशासनिक ढांचा अंग्रेजीमय था। ऐसे में हिंदी में प्रशासन और तकनीक से जुड़ी विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली की बड़े पैमाने पर आवश्यकता थी, जो अनुवाद के सहारे ही निर्मित हो सकती थी। अत: अनुवाद का कार्य व्यापक स्तर पर शुरू हुआ। वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की

स्थापना हुई और उसने विभिन्न अनुशासनों के लगभग 08 लाख पारिभाषिक हिंदी शब्द बनाए हैं। किंतु इससे कोई खास फर्क नहीं पड़ा है।

भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा आज भी अंग्रेजी है, जबकि विज्ञान और प्रौद्योगिकी का साध्य केवल भौतिक विकास नहीं होता। समाज के चहुमुँखी विकास एवं उत्थान के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी की व्यापक पहुँच भी आवश्यक है। प्रश्न है कि भारतीय समाज और जीवन के विकास तथा उत्थान के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी आम आदमी तक पहुँचे कैसे ? इस पहुँच की भाषा क्या हो ? असलियत तो यह है कि अंग्रेजी माध्यम होने के कारण भारतीय जनजीवन में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की व्यापक पैठ तथा स्वीकार्यता नहीं है। आज के वैज्ञानिक युग में यह स्थिति निश्चय ही चिंताजनक है। इस स्थिति को बदलना ही होगा।

भारत को विकसित भारत, समृद्ध भारत और आत्मनिर्भर तथा स्वस्थ भारत बनाने के लिए यह बहुत जरूरी है कि हमारा चिंतन, आचरण तथा व्यवहार गुणात्मक रूप से बदले। इसके लिए जीवन-दृष्टि अथवा नजरिया में बदलाव लाना होगा। यह एक क्रांतिकारी अपेक्षा है। नजरिया बदल जाए तो आदमी बदल जाता है। आदमी में विचार और व्यवहार का द्वंद्व मिट जाता है। ऐसा आदमी कुंठामुक्त होता है तथा अपनी जड़ों से जुड़ाव महसूस करता है। ऐसा आदमी अपनी भाषा और संस्कृति का अनुरागी होता है। ऐसे में भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा का सवाल बृहत्तर परिप्रेक्ष्य का सवाल बन जाता है। यह सवाल भारतीय समाज को द्वंद्वमुक्त और कुंठाविहीन बनाने तथा अपनी भाषा और संस्कृति का प्रेमी व अनुरागी बनाने का सवाल है।

जहां तक अनुवाद की बात है, यह भाषिक अगम को सुगम बनाने का क्रान्तिकारी कर्म है। अनुवाद अपनी महत्तर भूमिका में देशों और दूरियों में फैले भाषाई विविधता को पाटकर संवाद का सिलसिला शुरू करता है। आज से सूचना-विस्फोट के दौर में भी यह सभ्यताओं के बीच आपसदारी कायम करने का जरूरी माध्यम है। इन्हीं गुणों के कारण अनुवाद सबके लिए, सभी भाषा-भाषियों के लिए और ज्ञान-विज्ञान के सभी अनुशासनों के लिए जरूरी है। भारत जैसे विकासशील देश में अनुवाद की जरूरत

आधुनिक ज्ञान और विज्ञान से परिचित होने तथा तकनीकी विकास की राह को प्रशस्त करने की जरूरत है। हमें दूसरी संस्कृतियों के सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद तो चाहिए ही, हमें ढेर सारे उपयोगी और कार्यविधि साहित्य और वैज्ञानिक शोध-साहित्य का भी त्वरित और तत्काल अनुवाद लगातार चाहिए।

पिछली सदी में प्राकृतिक आपदाओं से त्रस्त दुनिया ने पर्यावरण एवं विकास में संतुलन बनाये रखना आवश्यक समझा। फलस्वरूप पर्यावरण एवं विकास को लेकर गठित विश्व आयोग ने 1987 में सतत विकास (Sustainable Development) को परिभाषित करते हुए कहा, "विकास ऐसा हो जो मौजूदा जरूरतों को पूरा करे, किन्तु भावी पीढ़ी की जरूरतों को पूरा कर सकने की संभावनाओं को धूमिल न करे और जिसमें सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरण के लक्ष्यों का संतुलन बना रहे।"

आशय स्पष्ट है कि आज की विकसित दुनिया में सभी लोगों का कुछ-न-कुछ हितसाधन होना चाहिए और विकास की प्रक्रिया में सभी की भागीदारी भी होनी चाहिए। इसके लिए सर्वशिक्षा और कार्य-कौशल में उन्नयन जरूरी है। शिक्षा ऐसी हो, जो लोकभावनाओं को उन्नत करे और नवाचार के भावों को प्रोत्साहित करे। निश्चय ही ऐसी शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही सुलभ हो सकती है। कार्य-कौशल के उन्नयन में जिस सैद्धान्तिकी और प्रशिक्षण की जरूरत होती है, उसका माध्यम भी स्वभाषा ही हो सकती है। भारत में क्षेत्रीय भाषाओं के विकास तथा हिंदी के प्रसार के माध्यम से इन दोनों ही महत्वपूर्ण लक्ष्यों को पूरा किया जा सकता है। इसलिए कि जब हिंदी का प्रसार होगा तो इस बात की संभावना बढ़ेगी कि दुनिया के हर सातवें व्यक्ति को उसकी कल्पना का आकाश और रोजगार मिले। हमारा मतलब साफ है, **हम हिंदी के प्रसार के माध्यम से न केवल भारतीय समाज का, बल्कि दुनिया भर में रह रहे समस्त हिंदी-ज्ञानी भारत-मित्रों और उनके देशों का भी विकास और उत्थान चाहते हैं। हिंदी के जरिये हम वर्चस्वमुक्त, परस्पर निर्भर और भरोसेमंद समाज एवं संसार बनाना चाहते हैं।** इसके लिए जरूरी है कि हिंदी का शब्द-भण्डार समृद्ध हो। हिंदी में विशिष्ट विषय-क्षेत्रों कि संकल्पनावाची शब्दावलियों की उपलब्धतता हो। इसके वास्ते भाषांतरण, रूपांतरण, अनुकूलन आदि उपाय अपनाए जाने चाहिए। हिंदी का व्यापक पैमाने पर तकनीक समर्थित संवर्द्धन होना चाहिए। मानक निर्धारित होना चाहिए। हिंदी माध्यम से शिक्षण और प्रशिक्षण होने चाहिए। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के ग्रंथ हिंदी में लिखे जाने चाहिए।

अनुसंधान और विकास के साहित्य लेखन का माध्यम हिंदी बननी चाहिए। इन उपायों के द्वारा हिंदी आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा प्रशासन एवं प्रबंधन की भाषा बनकर हमारे दैनिक काम-काज की गुणवत्ता बढ़ाने में हमारा सक्षम माध्यम बन सकती है।

आज के समय में चारों ओर तुरंत और तत्काल मंजिल हासिल कर लेने की आपाधामी मची हुई है। इस आपाधापी में सबसे ज्यादा नुकसान भाषाओं को उठाना पड़ रहा है। प्रतिवर्ष 2% विश्व भाषाओं का लोप हो रहा है। प्रतिवर्ष वैज्ञानिक अनुसंधान के लगभग 2.25 लाख पृष्ठ शोध पत्रिकाओं तथा पुस्तकों के रूप में प्रकाशित हो रहे हैं। ये सारे-के-सारे प्रकाशन अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच, रूसी, जापानी, चीनी आदि भाषाओं में होते हैं। इनमें हिंदी सहित भारतीय भाषाएं कहीं नहीं हैं। इंटरनेट पर दुनिया की दस प्रमुख भाषाओं में भी हिंदी नहीं आती है। भारतीय समाज को 21वीं सदी में आधुनिक ज्ञान और विज्ञान के साथ कदमताल करने के लिए यह बेहद जरूरी है कि हिंदी में ज्ञान और विज्ञान के साहित्य अनुवादित और प्रकाशित हों। साथ ही हिंदी में मौलिक वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य लिखने का अभियान शुरू हो।

आज की दुनिया में ज्ञान का जिस तरह से स्फोट हो रहा है, उससे भारतीय समाज को परिचित कराने के लिए, उसे ज्ञान जगत का हिस्सेदार बनाने के लिए यह बहुत जरूरी हो गया है कि अनुवाद को व्यक्ति केन्द्रिक (Man-centric) कर्म से आगे ले जाकर समूह केन्द्रिक (Team-centric) सृजनात्मक उत्पाद में परिणत किया जाए। इसके लिए जरूरी है कि मशीन-ट्रांसलेशन की संकल्पना को विकसित किया जाए। साथ ही अनुवादक, भाषाविद् और भाषा वैज्ञानिकों एवं इस काम में अभिरूचि रखने वाले वैज्ञानिकों के साथ औद्योगिक घरानों का समूह बनाया जाए। अनुवाद की माँग को देखते हुए बाजार का समर्थन प्राप्त किया जाए। अनुवाद को अनुसृजन के रूप में विकसित किया जाए, जिससे कि मूल लेखन के समस्त विचार और भाव अनूदित पाठ में उद्भाषित हो सकें। ऐसा करने से रोजगार के नये अवसर विकसित होंगे तथा अनुवाद के प्रति बाजार की अभिरुचि और मांग बढ़ेगी।

दुनिया के विकासशील देश आज जिन वजहों से भारत को आशाभरी निगाहों से देख रहे हैं, उनमें भाषाई संकट से मुक्ति की आकांक्षा और उसके निराकरण की तलाश भी एक बड़ी वजह है। हम अपने

अनुवाद मॉडल से भी अपने उत्तरदायित्व और नेतृत्वकारी दावेदारी को सशक्त बना सकते हैं। आज का भारत विकासशील समाज और देश की सर्वतोन्मुखी जरूरतों और सभी दिशाओं से मिलने वाले ज्ञान-प्रकाश से आँखें चुरा नहीं सकता। विकसित समाज बनने के लिए ज्ञान से आँखें चार करना अहम होता है। इस काम में अनुवाद से गति मिलती है और सृजनशीलता भी परिपक्व होती है; क्योंकि अनुवाद नैसर्गिक रूप से चार आँखों का कर्म है। इस चार आँखों के कर्म से आँखें चार कर विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में ज्ञानार्जन और नवाचार के जरिए आधुनिक भारत को विकसित भारत बनाना हम सभी का सपना होना चाहिए।